समक्ष - के.एस. गरेवाल, जे

तारा चंद -याचिकाकर्ता

बनाम

हरियाणा राज्य और अन्य,-प्रतिवादी

सी.डब्ल्यू.पी. क्र. संख्या 17771ऑफ़ 1995

9 फ़रवरी 2005

भारत का संविधान, 1950- अनुच्छेद 226 और 311-पंजाब सिविल सेवा नियम, वॉल्यूम I नियम 1. 3.26(d), वॉल्यूम II नियम 1.5.32 A(C)- एक पुलिस अधिकारी के खिलाफ आपराधिक मामले-याचिकाकर्ता लगभग एक साल और नौ महीने तक अदालत की प्रक्रिया की सेवा से बचता रहा-सेवा से निलंबन-एक अवमानना मामले में उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि और 3 महीने का साधारण कारावास का पुरस्कार और सुप्रीम कोर्ट द्वारा पुष्टि की गई - सरकार ने 55 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर याचिकाकर्ता को बिना किसी कलंक के अनिवार्य रूप से सेवानिवृत्त करना - सरकार डी.जी.पी. के सेवानिवृत्ति के आदेश वापस लेने के लिए नहीं मान रहे - क्या निलंबन अवधि के दौरान याचिकाकर्ता को सेवानिवृत्त करने का आदेश अनुच्छेद 311 का उल्लंघन है – **अभिनिर्णित** - नहीं–याचिकाकर्ता की सेवानिवृत्ति सजा के रूप में नहीं बल्कि सार्वजनिक हित में है–सरकार की याचिकाकर्ता को निलंबन अवधि के दौरान सेवानिवृत्त करने की कार्रवाई न तो अवैध है और न ही नियमों के प्रावधानों के विपरीत है- याचिका खारिज होने योग्य है।

अभिनिर्णित - अनिवार्य सेवानिवृत्ति प्रमुख दंडों में से एक है जिसे संबंधित दंड और अपील नियमों के अनुसार पूरी जांच के बाद सरकारी कर्मचारी पर लगाया जा सकता है। हालाँकि, अनिवार्य सेवानिवृत्ति एक सरकारी कर्मचारी को सेवानिवृत्त करने का एक साधन भी है, जब उसने रोजगार की एक निश्चित अवधि पूरी कर ली है, लेकिन सेवानिवृत्ति की आयु तक नहीं पहुंचा है। सरकारी कर्मचारी की समय से पहले अनिवार्य सेवानिवृत्ति का उद्देश्य अपर्याप्त, भ्रष्ट, निकम्मे और बेईमान कर्मचारियों को सेवा से बाहर करना है। यह स्थापित अधिकार है जिसका प्रयोग कानून के अनुसार किया जाता है और यह एक पूर्ण अधिकार है। किसी सरकारी कर्मचारी को सेवानिवृत्त करने की शक्तियों का प्रयोग सार्वजनिक हित में किया जाता है। लोक प्रशासन के संबंध में सार्वजनिक हित इस बात पर जोर देता है कि केवल ईमानदार और कुशल व्यक्तियों को ही सेवा में रखा जाना चाहिए। सेवा के नियमों और शर्तों के अनुसार अनिवार्य सेवानिवृत्ति, अनुच्छेद 311 के तहत बर्खास्तगी या निष्कासन या रैंक में कमी के बराबर नहीं है क्योंकि सरकारी कर्मचारी अपने द्वारा अर्जित सेवांत लाभों को नहीं खोता है। हालाँकि, यदि अनिवार्य सेवानिवृत्ति को सिद्ध कदाचार के लिए दंड के माध्यम से प्रस्तावित किया जाता है, तो भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के प्रावधान आकर्षित होंगे और अनिवार्य सेवानिवृत्ति के दंड से पहले नियमों के अनुसार एक जांच शुरू करनी होगी। थोप दी गई है. इसके अलावा, यदि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश सरकारी कर्मचारी पर इस अर्थ में कलंक लगाता है कि जिसमें उसके आचरण, चरित्र या सत्यनिष्ठा पर संदेह पैदा करने वाला कोई बयान है, तो

न्यायालय उस आदेश को दंड के आदेश के रूप में मानेगा। इस पर संविधान के अनुच्छेद 311(2) के प्रावधान लागू होंगे।

(पैरा 12)

इसके अलावा निर्धारित किया गया- कि याचिकाकर्ता को उसके कदाचार के विभिन्न कृत्यों के लिए दंडित नहीं किया गया था। कदाचार के दो मुख्य बिंदु हैं, एक साल और नौ महीने तक सेवा से बचना और अदालत की अवमानना के लिए दोषी होना और सत्र न्यायालय की गरिमा को अंदर और बाहर दोनों जगह कम करने के लिए तीन महीने की सजा । उपरोक्त दोनों कृत्य एक पुलिस अधिकारी के लिए अशोभनीय थे, जिसने पुलिस और आपराधिक अदालतों के बीच मजबूत और सुलझे हुए संबंधों और आपराधिक न्याय प्रणाली के सफल कामकाज के हित में इन बंधनों को मजबूत और दृढ़ बनाए रखने की आवश्यकता को, पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया था। उपरोक्त के बावजूद, याचिकाकर्ता को सजा के तौर पर नहीं बल्कि जनहित में अनिवार्य सेवानिवृत्ति दे दी गई।

(पैरा 17)

इसके अलावा निर्धारित किया गया- कि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश दंड का उपाय नहीं था और इसमें कोई कलंक नहीं था। यह आदेश पंजाब सिविल सेवा नियम, वॉल्यूम II नियम 5.32 A(C)- के संदर्भ में पारित किया गया था, जो कि हरियाणा राज्य पर लागू उक्त नियम , वॉल्यूम I नियम 3.26(d)- के साथ पढ़ा गया था। कोई भी यह दर्ज किए बिना नहीं रह

सकता कि अवमानना के लिए याचिकाकर्ता की सजा के बाद, जिसे सुप्रीम कोर्ट ने बरकरार रखा था, सरकार के पास उसके खिलाफ विभागीय कार्रवाई करने और उसे बड़ा जुर्माना देने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा था। उस समय वह अदालत की प्रक्रिया से बचने के लिए पहले से ही निलंबित थे। सरकार ने उन्हें सज़ा न देकर बिना किसी कलंक के सेवानिवृत्ति देकर राहत देने का फैसला किया। उक्त कार्रवाई वास्तव में याचिकाकर्ता पर कुछ हद तक नरम थी। उत्तरदाताओं ने संयम का रास्ता चुना था जब वह याचिकाकर्ता को पर्याप्त रूप से दंडित करना उचित होता।

(पैरा 19)

आर.एस. खुंडू - याचिकाकर्ता के वकील

विजय दहिया, A.A.G., हरियाणा - राज्य के लिए वकील

निर्णय

के.एस. गरेवाल, जे.

(1) डी.एस.पी. तारा चंद ने यह याचिका 3 जुलाई, 1995 के आदेश को चुनौती देने के लिए दायर की है, जिसके तहत उन्हें जनहित में अनिवार्य सेवानिवृत्त कर दिया गया था।

(2) याचिकाकर्ता को 1987 में एस.एच.ओ., पुलिस स्टेशन सदर, हिसार के रूप में तैनात किया गया था। उन्हें इस आशय की गुप्त सूचना मिली कि कुछ व्यक्तियों के पास

अवैध हथियार हैं, जिसके बाद उन्होंने F.I.R. 236 दिनांक 2 अगस्त, 1987 ,शस्त्र अधिनियम की धारा 25 और आतंकवादी और विघटनकारी गतिविधि अधिनियम की धारा 6 के तहत , दर्ज की। 25 सितंबर, 1987 को श्री भजन लाई, प्रतिवादी नंबर 3 और उस समय भारत सरकार में एक कैबिनेट मंत्री ने उन्हें फोन किया और उनके समर्थकों को परेशान करने के लिए गंभीर परिणाम भुगतने की धमकी दी। याचिकाकर्ता ने टेलीफोन कॉल प्राप्त किया और कॉल का सार पुलिस स्टेशन की दैनिक डायरी में दर्ज किया।

(3) 21 नवंबर, 1987 को, एक धर्मपाल ने हरियाणा के मुख्यमंत्री को एक पत्र लिखा था, जो याचिकाकर्ता को पुलिस अधीक्षक, हिसार के माध्यम से प्राप्त हुआ था । उसमें लिखा था की "कृपया मामला दर्ज करें और जांच करें" । धर्मपाल का प्रतिनिधित्व, प्रतिवादी नंबर 3 के खिलाफ एक शिकायत थी और इसे F.I.R. क्रमांक 372 धारा 161/165 एवं भ्रष्टाचार निवारण अधिनियम 1988 की धारा 5 के अंतर्गत दर्ज किया गया था। F.I.R. को बाद में इस न्यायालय में चुनौती दी गई और इसे रद्द कर दिया गया, लेकिन जब प्रतिवादी नंबर 3 , मई, 1991 में हरियाणा विधान सभा के लिए चुना गया और राज्य के मुख्यमंत्री के रूप में नियुक्त किया गया, तो उसने याचिकाकर्ता को निलंबित कर दिया। इस निलंबन आदेश को बाद में हटा दिया गया था, लेकिन 5 जुलाई, 1991 को याचिकाकर्ता के खिलाफ फिर से निलंबन का आदेश पारित किया

गया था क्यूंकि "उसके खिलाफ अदालत में दण्डनीय अपराध को ध्यान में रखते हुए और वह लगभग " एक साल और नौ महीने" अदालत की प्रक्रिया की सेवा से बच रहा है।

(4) अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश को चुनौती देने का मुख्य आधार यह था कि याचिकाकर्ता को निलंबन के दौरान सेवानिवृत्त करना गैरकानूनी था। **प्रेम सिंह बनाम हरियाणा राज्य और अन्य**[1], इस न्यायालय की एक पीठ के फैसले और **एस.के. तनेजा बनाम हरियाणा राज्य**[2], इस न्यायालय की एक खंडपीठ का फैसला जिसमें प्रेम सिंह के मामले पर भरोसा किया गया है, पर भरोसा रखा गया है।

(5) याचिका के प्रासंगिक पैराग्राफ के जवाब में, यह प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ता को धारा 323/342/500 IPC के तहत उसके खिलाफ आपराधिक शिकायत और न्यायालय की प्रक्रिया से भागने के मद्देनजर रखते हुए निलंबित कर दिया गया था। याचिकाकर्ता को IPC की धारा 409 के तहत, पुलिस स्टेशन, सिविल लाइन्स, हिसार में दर्ज एक मामले में, अभियोजन का भी सामना करना पड़ा। इसके अलावा, याचिकाकर्ता को 22 फरवरी, 1990 को इस न्यायालय द्वारा **अपने स्वयं के प्रस्ताव बनाम तारा चंद**,(Cr. O.C.P. No. 9 of 1989) 29 अगस्त, 1989 को उनके द्वारा की गई सत्र न्यायाधीश, हिसार की अदालत की आपराधिक अवमानना के संबंध में दोषी ठहराया

[1] 1993 (2) R.S.J. 526
[2] 1994(2) R.S.J. 425

गया था और अवमानना मामले में तीन महीने के लिए साधारण कारावास की सजा सुनाई गई थी, ।

(6) उत्तरदाताओं द्वारा आगे प्रस्तुत किया गया कि याचिकाकर्ता को पंजाब सिविल सेवा नियम(जैसा कि हरियाणा पर लागू है), वॉल्यूम । नियम 1. 3.26(d) के साथ पढ़े गए वॉल्यूम II नियम 1.5.32 A(C) के अनुसार 55 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद सेवा से सेवानिवृत्त कर दिया गया था। यह कार्रवाई उनके रिकॉर्ड को देखते हुए की गई है, जिसमें उन्हें आगे सेवा में बने रहने के लिए अयोग्य ठहराया गया है। उत्तरदाताओं की ओर से कोई भी गलत इरादा नहीं था। याचिकाकर्ता को तीन महीने के नोटिस के बदले तीन महीने का वेतन और भत्ते दिए गए। इसके अलावा, यह दावा किया गया कि नियुक्ति प्राधिकारी के पास किसी भी सरकारी कर्मचारी को 55 वर्ष की आयु प्राप्त करने पर या उसके बाद बिना कोई कारण बताए सेवानिवृत्त करने का पूर्ण अधिकार है। प्रतिवादी संख्या 3 द्वारा अलग उत्तर दायर किया गया था। याचिकाकर्ता ने लिखित बयानों की प्रतिकृति भी दायर की।

(7) इसके बाद, याचिकाकर्ता ने C.M. संख्या 16367 ऑफ़ 2004 दायर की और चार निर्णयों/आदेशों की प्रतियां और एक अनुशंसा की प्रति रिकॉर्ड पर रखी गईं। निर्णय/आदेश निम्नलिखित थे:-

(i) IPC की धारा 504/506 के तहत **राम नारायण कौशिक, वकील बनाम तारा चंद** नामक आपराधिक शिकायत में न्यायिक मजिस्ट्रेट, प्रथम श्रेणी, हिसार द्वारा दिनांक 30 अप्रैल, 1994 को पारित निर्णय। आरोपी को संदेह का लाभ दिया गया और बरी कर दिया गया।

(ii) IPC धारा 323/342/504/506. के तहत **बनवारी लाई बनाम तारा चंद, डी.एस.पी.** नामक आपराधिक शिकायत में अतिरिक्त मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, नारनौल द्वारा पारित आदेश दिनांक 17 मार्च, 1994। मामला सुलझ गया और आरोपी को बरी कर दिया गया।

(iii) IPC धारा 342/504/506/323/392 के तहत एक मामले में मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, हिसार द्वारा 1 अक्टूबर, 1992 को **सुल्तान सिंह बनाम तारा चंद** का फैसला सुनाया गया। आरोपी को डिस्चार्ज कर दिया गया ।

(iv) **राम नारायण कौशल, वकील बनाम इंस्पेक्टर तारा चंद** (आपराधिक अपील 371-DBA ऑफ़ 1992) के मामले में इस न्यायालय की एक डिवीजन बेंच द्वारा 1 फरवरी, 1994 को आदेश पारित किया गया था। अपील पर अपीलकर्ता द्वारा दबाव नहीं डाला गया था और इसे वापस लिया मानकर खारिज कर दिया गया था।

(8) याचिकाकर्ता ने पुलिस महानिदेशक, हरियाणा द्वारा वित्तीय आयुक्त और सचिव, हरियाणा सरकार, गृह विभाग को संबोधित दिनांक 11 सितंबर, 2001 के संचार पर भी

भरोसा किया, जिसमें एक सिफारिश थी कि 3 जुलाई, 1995 को पारित अनिवार्य सेवानिवृत्ति आदेश को वापस लिया जा सकता है।

(9) राज्य ने C.M. 16367 ऑफ़ 2004 मे जवाब दाखिल किया और स्वीकार किया कि पुलिस महानिदेशक, हरियाणा ने सेवानिवृत्ति आदेश को वापस लेने की सिफारिश की थी लेकिन 10 नवंबर, 1999 के आदेश (अनुलग्नक R- I) का हवाला दिया जिसमें निम्नलिखित आदेश पारित किया गया था: -

> "श्री तारा चंद, डी.एस.पी. सेवानिवृत्त को न्यायालय की अवमानना अधिनियम की धारा 2 (c) के तहत दोषी ठहराया गया और 3 महीने की साधारण कारावास(CRL O.C.P. No. 9 of 1989) से दंडित किया गया । भारत के माननीय सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 5 सितंबर, 1989 से 1 दिसंबर, 1989 तक निलंबन की अवधि के दौरान पुष्टि की गई और कहा गया कि निर्वाह भत्ते से अधिक कुछ नहीं दिया जा सकता, अधिकारी को जो भुगतान पहले ही किया जा चुका है, वह दिया जा सकता है, हालांकि इस अवधि को पेंशन में गिना जा सकता है। 5 जुलाई, 1991 से 3 जुलाई, 1995 तक की निलंबन अवधि को कर्तव्य अवधि माना जाएगा। वह सभी परिणामी लाभों का हकदार होगा।"

(10) सरकार द्वारा उपरोक्त सिफारिश पर विचार करने और 11 दिसंबर, 2001 को इसकी अस्वीकृति (अनुलग्नक R-III) का भी संदर्भ दिया गया था। बाद में पुनर्विचार का अनुरोध

किया गया लेकिन 21 मई, 2003 को इसे भी खारिज कर दिया गया (अनुलग्नक R-V)।

(11) में इस न्यायालय के दिनांक 22 फरवरी 1990 के आदेश की एक प्रति, **अपने स्वयं के प्रस्ताव बनाम श्री तारा चंद उप एस.पी. हरियाणा** (Cr. O.C.P. 9 of 1989) उत्तरदाताओं द्वारा को रिकॉर्ड पर रखा गया था। इस मामले में इस न्यायालय की एक खंडपीठ ने याचिकाकर्ता द्वारा दी गई माफी को खारिज कर दिया और उसे आपराधिक अवमानना का दोषी पाया, अवमाननाकर्ता (याचिकाकर्ता) को तीन महीने के साधारण कारावास की सजा सुनाई गई।

(12) अनिवार्य सेवानिवृत्ति प्रमुख दंडों में से एक है जो संबंधित दंड एवं अपील नियमों के अनुसार पूरी जांच के बाद सरकारी कर्मचारी पर लगाया जा सकता है। हालाँकि, अनिवार्य सेवानिवृत्ति एक सरकारी कर्मचारी को रोजगार की एक निश्चित अवधि पूरी करने के बाद , लेकिन जो सेवानिवृत्ति की आयु तक नहीं पहुंचा है, सेवानिवृत्त करने का मामला भी है । सरकारी कर्मचारी की समय से पहले या अनिवार्य सेवानिवृत्ति का उद्देश्य अपर्याप्त, भ्रष्ट, निकम्मे और बेईमान कर्मचारियों को सेवा से बाहर करना है। यह एक सुस्थापित अधिकार है जिसका प्रयोग कानून के अनुसार किया जाता है और यह एक पूर्ण अधिकार है। किसी सरकारी कर्मचारी को सेवानिवृत्त करने की शक्तियों का प्रयोग सार्वजनिक हित में किया जाता है। लोक प्रशासन के संबंध में सार्वजनिक हित इस बात पर जोर देता है

कि केवल ईमानदार और कुशल व्यक्तियों को ही सेवा में रखा जाना चाहिए। सेवा के नियमों और शर्तों के अनुसार अनिवार्य सेवानिवृत्ति, अनुच्छेद 311 के तहत बर्खास्तगी या निष्कासन या रैंक में कमी के बराबर नहीं है क्योंकि सरकारी कर्मचारी उसके द्वारा अर्जित सेवांत लाभों को नहीं खोता है। हालाँकि, यदि अनिवार्य सेवानिवृत्ति को सिद्ध कदाचार के लिए दंड के माध्यम से प्रस्तावित किया जाता है, तो भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 (2) के प्रावधान आकर्षित होंगे और अनिवार्य के दंड से पहले नियमों के अनुसार एक जांच शुरू करनी होगी। इसके अलावा, यदि अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश सरकारी कर्मचारी पर इस अर्थ में कलंक लगाता है कि इसमें उसके आचरण, चरित्र या सत्यनिष्ठा पर संदेह पैदा करने वाला कोई बयान है, तो न्यायालय उस आदेश को दंड के आदेश के रूप में मानेगा। यह संविधान के अधिनियम 311(2) के प्रावधानों को आकर्षित करेगा।

(13) वर्तमान मामले में विचारणीय बिंदु यह है कि क्या याचिकाकर्ता की अनिवार्य सेवानिवृत्ति कलंकात्मक थी। क्या यह कहा जा सकता है कि याचिकाकर्ता का 5 जुलाई, 1991 से 3 जुलाई, 1995 को उसकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति तक निलंबन जारी रहना आवश्यक था या आदेश पारित होने से पहले निलंबन रद्द कर दिया जाना चाहिए था।

(14) **प्रेम सिंह** के मामले (supra) में सरकारी कर्मचारी को निलंबित कर दिया गया था - 14 जनवरी, 1974 के आदेश के तहत, उस पर 15 मामलों में मुकदमा चलाया गया था,

लेकिन 18 सितंबर,1984 को मजिस्ट्रेट ने सभी मामलों में बरी कर दिया था, फिर भी वो निलंबित रहा , बहाल नहीं किया गया । नतीजतन, उन्होंने एक रिट याचिका दायर की, जिस याचिका के लंबित रहने के दौरान 21 मार्च, 1989 को अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया गया। इस आदेश को इस आधार पर चुनौती दी गई कि यह दंडात्मक था और इस प्रकार भारत के संविधान के अनुच्छेद 311 का उल्लंघन है। न्यायालय ने माना कि निलंबन के दौरान किसी व्यक्ति की सेवानिवृत्ति अपने आप में अहानिकर नहीं थी, लेकिन उक्त मामले में सेवानिवृत्ति का आदेश, जिसके तहत कर्मचारी अभी भी निलंबित था, एक निश्चित कलंक के साथ-साथ बकाया जैसे कुछ लाभों के नुकसान के दंडात्मक परिणाम भी देता है। ऐसी स्थिति में अनुच्छेद 311 के प्रावधानों का अनुपालन करने के बाद ही सेवानिवृत्ति का आदेश पारित किया जा सकता था। कानून की उपरोक्त व्याख्या का पालन **एस.के. तनेजा** का मामला (supra) में डिवीजन बेंच द्वारा किया गया था।

(15) वर्तमान मामले में याचिकाकर्ता ने निलंबित होने के बाद उसके खिलाफ शुरू की गई अनुशासनात्मक कार्यवाही की प्रकृति का कोई विवरण नहीं दिया है। हालाँकि, निलंबन आदेश से इतना तो स्पष्ट है कि याचिकाकर्ता लगभग एक वर्ष और नौ महीने तक न्यायालय की प्रक्रिया की सेवा से बचता रहा। याचिकाकर्ता ने इतने लंबे समय तक अदालत के सामने पेश न होने का कोई औचित्य नहीं बताया है। याचिकाकर्ता ने

अवज्ञाकारी रवैया प्रदर्शित किया जो निश्चित रूप से एक पुलिस अधिकारी के लिए अशोभनीय था। इस प्रकार की अवज्ञा के लिए याचिकाकर्ता को संचयी प्रभाव से वेतन वृद्धि रोकना, समय वेतनमान में निचले स्तर पर कटौती, अनिवार्य सेवानिवृत्ति, सेवा से निष्कासन या सेवा से बर्खास्तगी जैसे किसी भी बड़े दंड से सम्मानित किया जा सकता था। सरकार ने याचिकाकर्ता को इनमें से कोई भी दंड नहीं दिया। याचिकाकर्ता को सजा के तौर पर अनिवार्य सेवानिवृत्ति नहीं दी गई थी, बल्कि उसे 55 वर्ष की आयु प्राप्त करने के बाद सेवानिवृत्त किया गया था।

(16) याचिकाकर्ता की जन्मतिथि 12 अक्टूबर, 1938 थी, उन्होंने 1964 से 1967 तक शिक्षा प्रशिक्षक के रूप में सेना में सेवा की और 30 मार्च, 1971 को सहायक उप-निरीक्षक के रूप में शामिल हुए। उन्हें उप-निरीक्षक के पद पर 2 फरवरी, 1977 को पदोन्नत किया गया था और 16 फरवरी, 1986 को इंस्पेक्टर के पद पर। उन्हें 1988 में पुलिस उपाधीक्षक के पद पर पदोन्नति दी गई। अपनी याचिका में, याचिकाकर्ता ने पुलिस स्टेशन की दैनिक डायरी में अपना नाम दर्ज होने का दावा किया, कि प्रतिवादी संख्या 3, एक केंद्रीय कैबिनेट मंत्री, ने उसे धमकी दी थी। उन्होंने इस तथ्य के बारे में भी दावा किया कि उन्होंने प्रतिवादी संख्या 3 के खिलाफ भ्रष्टाचार अधिनियम, 1988 के प्रावधानों के तहत मामला दर्ज किया था। यह प्रतिवादी संख्या 3 के खिलाफ दुर्भावना के उनके आधार को मजबूत करने के लिए अनुरोध किया गया था।

(17) याचिकाकर्ता को उसके कदाचार के विभिन्न कृत्यों के लिए दंडित नहीं किया गया था। कदाचार की दो मुख्य बातें हैं एक साल और नौ महीने तक सेवा से बचना और अदालत की अवमानना के लिए दोषसिद्धि के बाद सत्र न्यायालय की गरिमा को कम करने के लिए तीन महीने की सजा । उपरोक्त दोनों कृत्य एक पुलिस अधिकारी के लिए अशोभनीय थे , जिसने पुलिस और आपराधिक न्यायालयों के बीच मजबूत और सुलझे हुए संबंधों और आपराधिक न्याय प्रणाली के सफल कामकाज के हित में इन संबंधों को मजबूत और दृढ़ बनाए रखने की आवश्यकता को पूरी तरह से नजरअंदाज कर दिया था। उपरोक्त के बावजूद, याचिकाकर्ता को सजा के तौर पर नहीं बल्कि जनहित में अनिवार्य सेवानिवृत्ति दे दी गई। याचिकाकर्ता को नोटिस के बदले में तीन महीने का वेतन मिला और अक्टूबर, 1996 में उसकी सेवानिवृत्ति तक सेवा के लिए केवल एक वर्ष का समय मिला। याचिकाकर्ता को बाद में उक्त अवधि को कर्तव्य अवधि के रूप में मानते हुए निलंबन की अवधि के लिए भी वेतन दिया गया। उन्हें सभी परिणामी लाभों का हकदार माना गया।

(18) उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, यह माना जाता है कि याचिकाकर्ता का मामला **प्रेम सिंह** के मामले में निर्धारित नियम के अंतर्गत नहीं आता है। इस न्यायालय ने **जे.एम. शर्मा बनाम हरियाणा राज्य और अन्य**[3] में निम्नानुसार निर्धारित किया था: -

[3] 1981(1) S.L.R. 554

"यदि नियम सक्षम प्राधिकारी को किसी लोक सेवक को अनिवार्य सेवानिवृत्ति देने का अधिकार क्षेत्र देते हैं और उक्त प्राधिकारी उस अधिकार क्षेत्र का प्रयोग करते हुए ऐसी अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश पारित करता है, तो जब तक यह नहीं दिखाया जाता कि आदेश दंड के माध्यम से है, कोई गलती नहीं की जा सकती सेवानिवृत्ति के उक्त आदेश के साथ पाया गया। केवल यह कि एक अपराधी लोक सेवक को उसकी अनिवार्य सेवानिवृत्ति के आदेश पारित होने से पहले निलंबित कर दिया गया है, मेरी राय में, यह एकमात्र निष्कर्ष नहीं है कि इसे सजा के रूप में पारित किया गया है।

(19) वर्तमान मामले में अनिवार्य सेवानिवृत्ति का आदेश दंड का उपाय नहीं था और इसमें कोई कलंक नहीं था। यह आदेश पंजाब सिविल सेवा नियम, वॉल्यूम II नियम 5.32 A(C)के संदर्भ में पारित किया गया था, जो कि हरियाणा राज्य पर लागू उक्त नियम, वॉल्यूम I नियम 3.26(d),के साथ पढ़ा गया था। कोई भी यह दर्ज किए बिना नहीं रह सकता कि अवमानना के लिए याचिकाकर्ता की सजा के बाद, जिसे सुप्रीम कोर्ट ने बरकरार रखा था, सरकार के पास उसके खिलाफ विभागीय कार्यवाही करने और उसे बड़ा जुर्माना देने के अलावा कोई विकल्प नहीं बचा था। उस समय वह अदालत की प्रक्रिया से बचने के लिए पहले से ही निलंबित थे। सरकार ने उन्हें सज़ा न देकर बिना किसी कलंक के सेवानिवृत्ति देकर राहत देने का फैसला किया। उक्त कार्रवाई वास्तव में याचिकाकर्ता पर

कुछ हद तक नरम थी। उत्तरदाताओं ने संयम का रास्ता चुना था जब याचिकाकर्ता को पर्याप्त रूप से दंडित करना उनके लिए पूरी तरह उचित होता।

(20) उपरोक्त के मद्देनजर, रिट याचिका निराधार है और खारिज की जाती है।

अस्वीकरण : स्थानीय भाषा में अनुवादित निर्णय वादी के सीमित उपयोग के लिए है ताकि वह अपनी भाषा में इसे समझ सके और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है । सभी व्यवहारिक और आधिकारिक उद्देश्यो के लिए निर्णय का अंग्रेजी संस्करण प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य के लिए उपयुक्त रहेगा ।

रितिज़ अरोड़ा

प्रशिक्षु न्यायिक अधिकारी

(TRAINEE JUDICIAL OFFICER)

(हरियाणा)